

“दुर्वासिना प्रतिकार दशकम्”

विद्यारण्य स्वामी कृत

संकलन कर्ता सुनील दत्त वशिष्ठ

भूमिका

"ऋते ज्ञानात् मुक्तिः" अर्थात् "ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं मिलती" — यह वेद, उपनिषदों और पुराणों की दृढ़, निरंतर प्रतिपादित भावना है। इस सिद्धांत का आधार संपूर्ण वेदांत है, जहाँ अविद्या (अज्ञान) को बंधन का कारण और विद्या (ज्ञान) को मोक्ष का एकमात्र साधन बताया गया है।

"परमात्मा ज्ञान उत्पाद्य (उत्पन्न किया जानेवाला) नहीं है और न ही वह संस्कार्य (संस्कारों से परिपूर्ण किया जानेवाला) है"—यह अद्वैत वेदांत का मूल सिद्धांत है। यह बताता है कि परमात्मा/ब्रह्मज्ञान किसी क्रिया, प्रयोग या बाह्य साधन से उत्पन्न नहीं किया जा सकता, अपितु वह तो नित्य, स्वप्रकाश और सदा उपलब्ध है—जिसे केवल अवरण (आवरण) हटाने से जाना जाता है।

"न हि ज्ञानं किञ्चित् उत्पाद्यते; न ह्यात्मनो रूपान्तरमपि विद्यया क्रियते।"

"ज्ञान कोई उत्पन्न की जाने वाली वस्तु नहीं है। न ही आत्मा का कोई नया रूप विद्या से किया जाता है।"

भावार्थ: आत्मा का ज्ञान उत्पन्न नहीं होता, वह पहले से ही विद्यमान है। विद्या (श्रवण, मनन, निदिध्यासन) केवल अज्ञान रूपी आवरण को हटाती है।

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्।"

भावार्थ: ज्ञान का स्वभाव है तत्त्वदर्शन करना — तत्त्व का निर्माण करना नहीं।

***नाविरतो दुश्चरितान्नाशान्तो नासमाहितः।**

नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात् ॥*

—कठ° वल्ली २। मं° २४

जो दुराचार से पृथक् नहीं, जिसको शान्ति नहीं, जिसका आत्मा योगी नहीं, और जिसका मन शान्त नहीं है, वह संन्यास लेके भी प्रज्ञान से परमात्मा को प्राप्त नहीं होता।

ब्रह्मज्ञान में कोई साक्षात् साधन नहीं है, बल्कि अधिकारी के अंतःकरण की शुद्धि में ही साधन की उपयोगिता है। अंतःकरण की शुद्धि के उपरान्त ज्ञान में ऐसे ही देर नहीं होती जैसे हमारी गले की कण्ठी को स्मरण होने में या दर्पण को साफ़ होने के उपरान्त उसमें रूप की उपलब्धि में देर नहीं लगती !

ब्रह्मज्ञान उत्पाद्य या संस्कार्य नहीं, वो तो दुश्चरित्र के कारण छुपा हुआ है, अतः दुश्चरित्र रूपी शत्रुओं का पर्दा हटाए बिना बिना परमात्म ज्ञान संभव नहीं इसलिए उनके विनाश के लिए उनको जानकर उनका त्याग अति आवश्यक हो जाता है,

इसलिए स्वामी श्री विद्यारण्य जी ने समस्त मनुष्य के कल्याण के लिए इस पुस्तक में उन दुश्चरित्रों का वर्णन किया है जिससे साधक उनको जान कर साधन के मार्ग में आगे बढ़ सके !

संकलनकर्ता

“ॐ”

1. अज्ञान (अविद्या)

श्लोकः

“अज्ञानं तु महान्दोषो ब्रह्मवित्त्वेऽपि बाधकः ।
तस्मात्तद्विनिवृत्त्यर्थं ब्रह्मभावनया सदा ॥”

व्याख्या: अज्ञान ही वह मूल दोष है जो ब्रह्मज्ञान को भी निष्फल कर देता है। इसका एकमात्र समाधान है – निरंतर ब्रह्मभावना।

उपनिषद् प्रमाण: मुण्डक उपनिषद् 1.2.10 –

अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितं मन्यमानाः ।

जङ्घन्त्यमानाः परिचिन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः ॥

अविद्या में रहते हुए, मूर्ख लोग स्वयं को ज्ञानी मानते हैं और अंधों के समान भटकते रहते हैं।

2. संकल्प / वासना

श्लोकः

“संकल्पस्य च दुष्टत्वं ब्रह्माभावो हि कारणम् ।
तदभावप्रत्ययेनैव तन्नाशः सम्प्रजायते ॥”

व्याख्या: संकल्प (वासना) केवल ब्रह्मत्व के अभाव के कारण उठती है। ब्रह्मभाव की प्रबलता से उनका नाश होता है।

उपनिषद् प्रमाण: बृहदारण्यक उपनिषद् 4.4.7 –

“यत्र हि द्वैतमिव भवति तत्र इतर इतरं जिघ्रति...

यत्र त्वस्य सर्वमात्मैवाभूत् तत्केन कं जिघ्रेत्।”

जब ब्रह्मभाव दृढ़ हो जाता है, तब अन्य का संकल्प नहीं होता।

3. राग (आसक्ति)

श्लोकः

“रागो वैराग्यहीनेन विवेकेन न जायते।
विवेकपूर्वकं तस्मात्त्यजेद्रागं च दुर्जयम्॥”

व्याख्या: राग तब होता है जब वैराग्य और विवेक नहीं होता।
विवेकपूर्वक ही राग का त्याग संभव है।

उपनिषद् प्रमाण: कठ उपनिषद् 2.1.2 –

“श्रेयो हि धीरः अभि प्रेयो वृणीते।”

धीर पुरुष श्रेय मार्ग का चयन करता है, प्रेय से विमुख होता है – यही विवेक है।

4. क्रोध

श्लोकः

“क्रोधः सर्वविनाशाय हेतुभूतो निरन्तरम्।
तस्मात्तं क्षमया नित्यं जित्वा मोक्षं समाचरेत्॥”

व्याख्या: क्रोध सबका नाश करता है – विवेक, तप, ज्ञान। क्षमा के अभ्यास से इसे जीतना चाहिए।

उपनिषद् प्रमाण: छान्दोग्य उपनिषद् 7.1.1 –

“क्रोधो वै अपरिघातः।”

(क्रोध आत्मा को आघात पहुँचाता है।)

5. मोह

श्लोकः

“मोहो मिथ्याभिमानेन जायते हि पुनः पुनः।
तस्मात्तद्विपरीतेन आत्मभावनया हरेत्॥”

व्याख्या: मोह “मैं” और “मेरा” की मिथ्या धारणा से उत्पन्न होता है। “मैं आत्मा हूँ” की भावना से उसका नाश होता है।

उपनिषद् प्रमाण: ईशावास्य उपनिषद् 1 –

“तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।”

(त्यागभाव से भोग करो – “मेरा” भाव मोह को जन्म देता है।)

6. अहंकार

श्लोकः

“अहंभावः परं दोषं ज्ञात्वा ब्रह्मणि लीयते।
नाहं कर्तेति निष्कामं कृत्वा कार्याणि बोधितः॥”

व्याख्या: अहंकार – “मैं करता हूँ” का भाव – यह बंधन का कारण है। ब्रह्म में लीन होकर “मैं नहीं, ब्रह्म ही करता है” – इस निष्ठा से काम करें।

उपनिषद् प्रमाण: श्वेताश्वतर उपनिषद् 6.11 –

“एको देवः सर्वभूतेषु गूढः... कर्मध्यक्षः सर्वभूताधिवासः।”

सब कर्मों के पीछे केवल ब्रह्म है – यह समझ अहं को मिटा देती है।

7. दम्भ (पाखंड)

श्लोकः

“दम्भो हि बहिरङ्गं स्यात् पावनं न हि तत्त्वतः।
तस्माद्दम्भं परित्यज्य स्वात्मनिष्ठां समाचरेत्॥”

व्याख्या: दम्भ केवल बाह्य प्रदर्शन है – इससे आत्मशुद्धि नहीं होती।
आत्मनिष्ठा ही पथ है।

उपनिषद् प्रमाण: मुण्डक उपनिषद् 1.2.8 –

“तपःश्रद्धे ये ह्युपवासान्त्यायाः... ये केवलं बाह्यं तपःचरन्ति।”
(जो केवल बाह्य तप करते हैं, वे सार से च्युत हैं।)

8. लोभ

श्लोकः

“लोभो हि पातकं ज्ञेयं संसारारण्यगाहनम्।
तस्माल्लोभं परित्यज्य तुष्ट्या सन्तोषमाचरेत्॥”

व्याख्या: लोभ एक पातक है – यह जन्म-जन्मांतरों के भटकाव का
कारण है। संतोष ही इसका उपाय है।

उपनिषद् प्रमाण: प्रश्न उपनिषद् 1.10 –

“सन्तोषं लभते योगी।”
(सच्चा योगी संतोष में स्थित रहता है।)

9. अविवेक

श्लोकः

“विवेकाभावसंयुक्तं जीवनं नास्ति निर्मलम्।
विवेकं तु सदा कुर्यादात्मन्येव स्थिरो भवेत्॥”

व्याख्या: विवेक का अभाव जीवन को अंधकारमय बनाता है। आत्मा और अनात्मा का भेद ही मुक्ति का मार्ग है।

उपनिषद् प्रमाण: कठ उपनिषद् 2.1.1 –

“उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत। क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया।”
(यह पथ कठिन है – विवेक से ही इसे पार किया जा सकता है।)

10. उपसंहार

श्लोकः

“एवं दोषविनाशाय दशकं रचयं मया।
पठत्यादरतो नित्यं तस्य मुक्तिः करस्थिता॥”

व्याख्या: इन दस दोषों को नष्ट करने के लिए यह दशकम् बनाया गया है। जो इसका नित्य पाठ करता है, उसकी मुक्ति सुलभ है।

उपनिषद् प्रमाण: कठ उपनिषद् 2.3.14 –

“नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो... यं एवेष वृणुते तेन लभ्यः।”

यह आत्मा श्रवण, मनन और निष्ठा से ही प्राप्त होती है।

ॐ शांति शांति शांति
